11

भगवान महावीरस्वामी का तप व उसका वैज्ञानिक रहस्य

श्रमण भगवान श्री महावीरस्वामी ने दीक्षा लेने के बाद बारह वर्ष, छः माह व पन्द्रह दिन तक विभिन्न प्रकार के तप किये । वे इस प्रकार हैं :-- बिना पानी पीये किये गये छः माह के उपवास एक बार, पाँच दिन न्यून छः माह के उपवास एक बार, नौ बार चार चार माह के उपवास, दो बार तीन तीन माह के उपवास, दो बार ढाई ढाई माह के उपवास, छः बार दो दो माह के उपवास, दो बार 45 -45 दिन के उपवास, बारह दफे एक एक माह के उपवास, बहत्तर बार 15 - 15 दिन के उपवास, 12 अट्ठम (तीन दिन के उपवास), 229 छट्ठ (दो दिन के उपवास), 10 दिन के उपवास की एक सर्वतोभद्र प्रतिमा, 4 दिन के उपवास की महाभद्र प्रतिमा, दो दिन के उपवास की भद्र प्रतिमा नामक तप व एक दीक्षा दिन का उपवास ।

श्रमण भगवान श्री महावीरस्वामी के जीवन में से प्रेरणा लेकर आज के युग में भी बहुत से जैन विभिन्न प्रकार के तप करते हैं । ऐसे तप करने का दरअसल में प्रयोजन मोक्षप्राप्ति होती है । तथापि जैन धर्म में बताये हुये तप व उसके प्रकार पूर्णतया वैज्ञानिक है ।

रात्रिभोजन का त्याग भी आज के युग में एक प्रकार का तप ही है । शरीर विज्ञान की दृष्टि से रात्रि के समय में प्रायः शारीरिक परिश्रम कम होता है अतः पाचन की प्रक्रिया भी मंद हो जाती है । अतएव रात्रिभोजन करनेवालों को ज्यादातर अजीर्ण, गैस (वायु) इत्यादि रोग होते हैं । उस के अलावा सूर्यप्रकाश के अभाव में वातावरण व खुराक में भी सूक्ष्म जीवाणुओं की ज्यादातर उत्पत्ति व वृद्धि होती है । सूर्यप्रकाश में ऐसी विशिष्ट शक्ति है कि उसके अस्तित्व में वातावरण का प्रदूषण व गैर आवश्यक सूक्ष्म जीवाणु भी खत्म हो जाते हैं । उसमें भी सूर्योदय पश्चात् 48 मिनिट बाद व सूर्यास्त से 48 मिनिट पूर्व भोजन करने का विधान है कयोंकि सूर्योदय व सूर्यास्त के समय मच्छर, मक्खी इत्यादि क्षुद्र जंतुओं का भारी उपद्रव होता है ।

जैन धर्म के अनुसार बियासणा के तप में सारे दिन में सिर्फ दो बार ही भोजन करने का विधान है । उसमें भी रात्रिभोजन व रात को जल का भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्णतः त्याग करना होता है और दिन में भी ऊबाला हुआ जल पीने का होता है । इसी वजह से आरोग्य विज्ञान की दृष्टि से जल में स्थित सूक्ष्म जीवाणु द्वारा होने वाले रोग से हम बच सकते हैं ।

एकासन अर्थात् दिन में सिर्फ एकबार ही एक साथ खा लेना । उसके पहले और बाद में दिन में सिर्फ ऊबाले हुए पानी के अलावा कुछ नहीं लेना । ऐसे दिन में सिर्फ एक बार ही नियमित खाने से शरीर के यंत्र को रात को पूर्णतः आराम मिलता है । अतः रात को खून व ऑक्सिजन की भी कम जरूरत पडती है । परिणामतः हृदय व फेफडों को ज्यादा श्रम नहीं करना पड़ता है । अतः शरीर को पूर्ण आराम मिलता है और सुबह के कार्यों में स्फूर्ति का अनुभव होता है । एकासन व बियासणा के आहार में भी अभक्ष्य, अपथ्य व तामसिक आहार का त्याग होता है और सात्त्विक, पौष्टिक व संतुलित आहार लिया जाता है । अतः अभक्ष्य या तामसिक खुराक से उत्पन्न होने वाली विकृतियाँ पैदा नहीं होती हैं ।

आहार के तीन प्रकार हैं : 1. सात्त्विक, 2. राजसिक, 3. तामसिक । सात्त्विक जीवन के लिये सात्त्विक आहार ही करना चाहिये । संभव हो तो राजसिक आहार भी नहीं करना चाहिये किन्तु तामसिक आहार तो कभी नहीं करना क्योंकि वह क्रोधादि कषायों को उत्पन्न करने वाला या उसका पोषक या उद्दीपक है । जैन धर्म ग्रंथों में बताये हुए नीति-नियम के अनुसार आहार करने वाले तामसिक आहार का सरलता से त्याग कर सकते हैं । परिणामतः कोई रोग उत्पन्न नहीं होते हैं ।

आयंबिल एक विशिष्ट प्रकार का तप है । इस तप में दिन में सिर्फ एक ही बार रूखा सूखा आहार लिया जाता है । उसमें मुख्य रूप से दूध, दही, घी, गुड, सक्कर, तेल, पक्वान्न, मिष्टान्न का त्याग होता है । उसमें हल्दी, मिर्च-मसाला या दूसरा कोई भी नमकीन नहीं लिया जाता है । इस तप से आध्यात्मिक दृष्टि से जीभ पर विजय पाकर शेष चारों इंद्रियों पर भी विजय पाया जा सकता है । सभी इन्द्रियाँ वश में आने पर चार कषाय और मन पर विजय प्राप्त होती है । परिणामतः कर्मबंध अल्प व निर्जरा ज्यादा होनेसे मोक्षप्राप्ति हो सकती है ।

इसके अलावा इस तप से शरीर में कफ व पित्त का शमन होता है क्योंकि कफ उत्पन्न करने वाले पदार्थ दूध, दही, घी, गुड, शक्कर, तेल,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पक्वान्न, मिष्टान्न सभी का इस तप में पूर्णतः त्याग होता है । हरी सब्जी जो सामान्यतः पित्तवर्धक होती हैं उनका भी त्याग होता है । आयुर्वेद की दृष्टि से सर्व रोग का मूल वात, पित्त और कफ की विषमता ही है । सामान्यतः लोग पित्त व कफ उत्पन्न हो वैसे ही पदार्थ खाते हैं । परिणामतः आरोग्य बिगडता है । जैन ग्रंथकारों ने भी प्रति माह पाँच या बारह दिन और बारह माह में चैत्र व आसोज माह में नौ-नौ दिन आयंबिल करने को कहा है । चैत्र व आसोज माह ऋतुओं का संधिकाल है । इस समय विशेषतः रोग होने की संभावनाएँ अधिक होती हैं । यदि आहार में पथ्यापथ्य का विवेक न रखा जाय तो बहुत लंबे समय की बिमारी हो सकती है । आयुर्वेद में कहा है कि *" वैद्यानां शारदी माता, पिता तु कुसुमाकरः । "* वैद्यराजों के लिये शरद ऋतु माता है और वसंत ऋतु पिता है क्योंकि इन ऋतुओं में ही लोग अधिक बिमार होते हैं और डॉक्टर व वैद्यों को अच्छी आमदनी होती है ।

उपवास जैन धर्म का एक अनोखा विशिष्ट तप है । उपवास दो प्रकार के होते हैं । 1. तिविहार और 2. चौविहार । जैन परंपरा के अनुसार उपवास का प्रारंभ अगले दिन शाम से होता है और समाप्ति तीसरे दिन सुबह होती है । अतः पूरे 36 घंटे का उपवास होता है । तिविहार उपवास में सुबह 10 बजे से सूर्यस्त तक सिर्फ ऊबाला हुआ ठंडा पानी ही पीया जाता है । जबकि चउविहार उपवास में पानी का एक बूंद भी नहीं लिया जाता है ।

जीवन के लिये हवा, पानी व आहार आवश्यक है । शक्ति के लिये आहार और आहार को पचाने लिये पानी व पचे हुए आहार में से शक्ति पाने के लिये ऑक्सिजन स्वरूप में हवा आवश्यक है । उपवास जैसे आत्मशुद्धि का साधन है वैसे वह देहशुद्धि का भी साधन है । उपवास करने से शरीर के अंदर से कचरा निकल जाता है । शरीर में बढे हुए वात, पित्त व कफ का उपशम या उत्सर्जन होता है और शरीर शुद्ध होता है । उपवास में किसी को दुसरे या तीसरे दिन पित्त का वमन होता है और उसके द्वारा बढा हुआ पित्त बाहर निकल जाता है । कफ हो तो वह भी दूर हो जाता है । अतः पंद्रह दिन या महिने में एक उपवास अवश्य करना चाहिये ।

संक्षेपमें, जैन धर्म में बताया गया रात्रिभोजन का त्याग, बियासना, एकासना, आयंबिल, उपवास आदि तप आरोग्यविज्ञान व शरीरविज्ञान की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दृष्टि से पूर्णतः वैज्ञानिक हैं और उससे आध्यात्मिक लाभ के साथ-साथ शारीरिक तंदुरस्ती में भी बहुत से फायदे होते हैं ।

The Eastern religious philosophies are concerned with timeless mystical knowledge, which lies beyond reasoning and cannot be adequately expressed in words. The relation of this knowledge to modern physics is but one of its many aspects and, like all the others, it cannot be demonstrated conclusively but has to be experienced in a direct intuitive way.

Fritjof Capra

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org